IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

ekgunkl ufe'kjk; dk jpuk de! vkj nfyr vfLerk

Mk jes'k ;kno
असि0 प्रोफेसर . हिंदी
राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय कैराना शामली

मोहनदास नैमिशराय का मानना है कि राजनैतिक आजादी की बात को एक तरफ रख दे तो असमानता और भेदभाव से भरे इस समाज –इस देश को दलित शायद अपना नहीं कह सकता है । देश एक भौगोलिक इकाई से अधिक मन द्वारा स्वीकारा गया प्रत्यय है , मूल्य है। देश का मूल्य स्वतंत्रता , समानता और बंधुत्व से बनता है। अगर नागरिको को यह मूल्य हासिल नहीं तो उनके लिए तो देश भूगोल के नक्शे की आकृति है और देशभक्ति एक खोखला तमाशा । देश प्रेम का यह तमाशा जितना बढता जाता है देश का अहसास उतना ही लोगों के दिलों में मरता चला जाता है। नैमिशराय जी अपने उपन्यास के माध्यम से देश ,समाज और मुक्ति के बारे में प्रचलित मान्यताओं पर सवाल खडा करते है। दलित समाज की मुक्ति का रास्ता इस देश के सवर्ण मध्यवर्ग की दिशा से अलग है। मुक्तिपर्व में शहर और दलित बस्ती के बीच का फासला इस अलगाव की पुष्टि करता है।

मुक्ति की अवधारणा भारतीय चिंतन परम्परा में लगभग बीज शब्द की तरह उपस्थित है। वेद – ब्रह्म को गाने वाले मीमांसा हां , वेदांत हो अथवा वेद विरोधी जैन, बौद्ध हो , सभी मुक्ति की सत्ता में अगाध विश्वास रखतें है। प्राचीन काल में मुक्ति का अर्थ इसके वर्तमान रूप से भिन्न हैं। प्राचीन काल में मुक्ति का आशय जरा मरण के बंधन से मुक्ति था। किसी संप्रदाय के लिए ज्ञान मुक्ति का मार्ग था तो किसी के लिए भक्ति तो किसी के लिए वैदिक कर्मकाण्ड । मुक्ति चिन्तन का समूचा प्राचीन उद्यम इस लोक नहीं परलोक के लिये था ,जीवन कम मृत्यु की चिंता से अधिक उभरता था । जैन और बौद्व धर्म तो ईश्वर की सत्ता में विश्वास ही नहीं करते थे । लेकिन मुक्ति के लिए दोनों ही धर्मो में बकायदा विधि विधान उपस्थित

jpukdkj ekgunkl ufe'kjk; (thou vkj jpuk de

रचनाकार मोहनदास नैमिशराय का जन्म 5 सितम्बर 1949 को पश्चिमी उत्तर प्रदेश के मेरठ शहर में हुआ था। दलित चेतना के निर्माण में यह शहर एक महत्वपूर्ण मुकाम रखता है। लेखक अपनी आत्मकथा में इसके बारे में कहते है ' मेरा शहर आरंभ से ही एक युद्वभूमि रहा है .....आजादी के बाद भी यह जंग जारी रही '। इनकी आरंभिक शिक्षा शहर के प्रसिद्व 'कुमार आश्रम ' में संपन्न हुई। इस स्कूल की स्थापना में आर्य समाज के कार्यकर्ताओं का योगदान था। लेकिन उनकी सद्इच्छा के बावजूद जाति का दंश शिक्षा संस्थाओं में बदस्तूर बना हुआ था। इनके बीच में ही लेखक ने यहॉ अपनी शिक्षा–दीक्षा कई तरह के अनुभवों से गुजर कर पूरी की

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

। इन अनुभवों ने दलित जीवन को लेकर उनमें नई दृष्टि दी जिसमें तत्कालीन महानायक डा0 अम्बेडकर के विचारों की धार उपस्थित है। विद्यार्थी जीवन में ही उन्हे दैनिक पत्र 'भीम सैनिक' के माध्यम से इन विचारों का परिचय प्राप्त हो गया था। स्नातक उपाधि हासिल करने के दरम्यान ही उन्होने हिन्दी पत्र 'समता शक्ति का संपादन किया । पत्रकारिता आगे चलकर उनके लेखक कर्म को सॅवारने और जन आकांक्षा को समझने समझाने के लिए कारगर साबित हुई

बाद में एम.ए. और बी.एड की उपाधि प्राप्त करने के बाद वे अध्यापन कार्य में लग गए । अध्यापन के साथ ही वे लेखन और दलित जागरूकता के लिए अपने सामाजिक कार्यो का निर्वहन करते रहे। इन कार्यो को सम्यक दिशा 'बामसेफ' संस्था के द्वारा दी गई। इस संगठन ने उत्तर भारत में दलित समाज को चेतना संपन्न और सत्ता संपन्न बनाने की दिशा में युगांतकारी कार्य किया था। नैमिशराय जी ने संगठन के हिन्दी पत्र 'बहुजन संगठक ' का संपादन किया। इस संगठन के कार्यो का ही परिणाम था कि दलित समाज को पहली बार उत्तर प्रदेश में राजनैतिक सत्ता पर अधिकार प्राप्त हुआ। राजनीति में अपने वैचारिक योगदान को आगे बढाते हुए उन्होने बहुजन अधिकार पत्र का प्रकाशन भी किया । इस पत्र ने दलित समाज के बीच अपने अधिकारों के लिए जागरूकता फैलाने का महत्वपूर्ण कार्य किया ।

इन कार्यो के बाद उन्होने कॉलेज में अपनी नौकरी को छोड स्वयं को पूरी तरह साहित्य और बौद्विक कार्यकलापों में पूरी तरह समर्पित कर दिया ।

ifjo'k dk thoUr –'; vkj –f"V ;

उपन्यास का मुख्य उद्देश्य दलित समाज और उसकी मुक्ति को सामाजिक – सांस्कृतिक परिवेश में अंकुरित होते और आगे बढने की प्रक्रिया में देखना है । कथा का आरंभ परिवेश के विस्तार पूर्वक वर्णन से होता है । परिवेश को लेखक ने उसकी छोटी–छोटी बारीकियों के साथ उभारा है । कई बार आश्चर्य हो सकता है कि इतने ब्यौरे की क्या वाकई में आवश्यकता थी ? यह देखते हुए कि हिंदी के 'गोदान , मैला आँचल और शेखर एक जीवनी' जैसे उपन्यासों का आरम्भ सीधे घटनाओं अथवा घटनाओं के आभास से होता है । वही मुक्ति पर्व का आरम्भ किसी घटना से नहीं बल्कि परिवेश के विस्तार पूर्ण बयान से होता है । परिवेश को लेखक ने इतनी शिद्दत के साथ उभरा है कि वह जीवन्त हो गया है । परिवेश के दो आयाम होते है – स्थान और काल । इस परिवेश का स्थान शहर का था , लेकिन बसावट गाँव और कस्बे के समान थी । दलित समाज की तरह यह बस्ती भी शहर के किनारे एक हाशिये पर थी । इस परिवेश में जंगल ,हगन हट ,पंचायत घर ,बस्ती ,पाठशाला और बंजर सभी कुछ शामिल है – एक दूसरे से मिलते हुए और उसे सहारा देते हुए । जहाँ बंजर है वही पंचायत घर है , जो जंगल है वही हगन हट है । यह परिवेश दलित बस्ती का है और इस परिवेश का निरूपण करने वाला लेखक भी दलित । यहॉ दलित और गैर दलित दृष्टि की तुलना करना

ISSN 2581-9429 IJARSCT

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

समीचीन होगा। गैर दलित लेखक जब दलित बस्तियों का निरूपण करते हैं तो उनकी दृष्टि पहले वहॉ फैली गन्दगी और बदबू की तरफ जाती है । 'धरती धन न आपना' में जगदीश चन्द्र ने दलित जीवन पर सहानुभूति से साथ लिखा है। वे विचार के स्तर पर दलित जीवन के साथ जुडना चाहते है। लेकिन जब वे उपन्यास में चमादडी(दलित बस्ती)पर नजर डालते हैं तो उन्हें बस्ती कुछ इस तरह से दिखाई देती है–'चमादडी में एक ही लम्बी और तंग गली थी । .....मुहल्ले के बाहर गोबर और कूडे के ढेर थे । एक दो छोटे मोटे छप्पर भी। पूरे मुहल्ले में एक भी ऐसा कोठा नहीं था ,जिसमें पक्की ईट लगी हो .....वे कमजोर और उनकी दीवारें खुदरी थी।''[1] लेकिन जब नैमिशराय जी परिवेश के बारे में लिखते है तो गंदगी और बदबू जैसी बातों का उल्लेख ही नहीं होता है। दोनों ही उपन्यासों में दलित बस्ती है। दोनों निरूपण में गरीबी और बदहाली उपस्थित है। लेकिन दोनों के दृश्य में अंतर है। एक में बस्ती की गंदगी पहले ही नजर आती है तो दूसरे में इसका जिक्र नहीं होता है । मुक्ति पर्व में जब दलित बस्ती आती है तो उसमें –''सडक के दोनों तरफ कच्चे पक्के घर । उन घरों के ऊपर नीम के पेड और पेडों के ऊपर नीला आसमान '' ।[2] ऐसा नहीं है कि इस बस्ती में गंदगी और कूडे के ढ़ेर नहीं रहे होगें या लेखक इन बस्तियों की गरीबी से कभी रूबरू न हुआ हो। शायद यह दलित लेखक की संवेदना की बनावट है जिसमें नीम का पेड़ और आसमान दलित बस्ती की पहचान बनते है। उसके संवेदन के झरोखें से ये दोनों चीजें ही छन कर आती हैं बाकी चीजें तो बाहर रह जाती है। दलित लेखक ने बस्ती में जीवन को जीया है और जीने वाले की नजर में एक टुकडा हरियाली और एक टुकडा आसमान बहुत मायने रखता है। जबकि खुदरी दीवारें और कूडे का ढेर संवेदन से बाहर रह जाते हैं। दृश्य का यह अंतर शायद दृष्टि के अंतर का असर है और शायद यह दलित और गैर दलित लेखन के अंतर की वजह बन भी बन जाता है ।

नैमिशराय जी जब परिवेश का निरूपण करते है तो उनकी नजर बस्ती की जिन्दा दिली की ओर जाती है । इस परिवेश में जीवन का स्पन्दन ऐसा है कि लोगो के साथ पशु और प्राणी भी इसमें शामिल है . नूर और नूरी के रूप में मुर्गा और मुर्गी है। सूअर भी सूअर नहीं गफूरन नाम से अपनी पहचान रखती है। ये सब इस परिवेश का हिस्सा बन जाते है । कथा में उनके संवाद नहीं है लेकिन मूक रह कर भी वो दोनों बहुत कुछ कह जाते है । यही नहीं 'बत्तों' तो उनसे अपना नाता भी बना लेती है। उनका हास परिहास चलता रहता है । इस बस्ती के जीवन में अभाव है , लोग इस अभाव को भावों से भर देते हैं। गॉव की औरतें एक तकलीफ भरा जीवन जीने को मजबूर है। लेकिन जीवन को वे बोझ मान कर नहीं जीती है । कोई बोझ मान कर जिन्दगी को ढो तो सकता है लेकिन उसे जी नहीं सकता है। हास परिहास उनकी जिन्दादिली को बनाए

[1] जगदीश चन्द्र –धरती धन न आपना ,पृ0सं0 15 ,राजकमल प्रकाशन नई दिल्ली , 2007
[2] मोहनदास नैमिशराय– मुक्तिपर्व ,पृ0सं0 15 , अनुराग प्रकाशन नई दिल्ली , 2012

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

रखता है और जिन्दगी को जीने का सम्बल देता है। इसी भावना के तहत 'बत्तो' मुर्गी को अपनी सौत बताती है तो चकरभिन्नी अपनी भाभी से निजी बातों को लेकर दिल्लगी करती रहती है। सम्बन्धों में इतनी उर्जा है जो औपचारिकताओं के बंधन–वर्जनाओं को तोड कर चलती है। यह मुक्त रूप ही परिवेश को जीवंत बनाता है।

मुक्ति पर्व जाति के सर्वग्रासी रूप को सामने लाता है। यहॉ देखने योग्य है कि दलित बंसी का सीधा शोषण कोई ब्राहाण नही बल्कि एक मुस्लिम नवाब अलीवर्दी खान कर रहा है। तो क्या इसे निम्न हिन्दू बनाम आभिजात्य मुस्लिम का विरोधाभास नहीं कहा जा सकता है , जाति के बजाय उच्च वर्ग बनाम निम्न वर्ग अंत;विरोध नहीं कहा जा सकता है ? यह शब्दावली सुविधाजनक तो हो सकती है लेकिन संतोषजनक नहीं। हिन्दू और मुस्लिम के बीच तो दलित बस्ती के बीच में बत्तो –रहमत परिवार और उनके नूरा–नूरी के प्रसंग इतनी आत्मीयता से नहीं आते । वे अलग धर्म के बावजूद दलित जीवन के हिस्से में भागीदार लगते है। वहीं, सामंती ठसक के नवाब के लिए जाति की चेतना धर्म के दायरे को पार कर जाती है। अलीवर्दी खान के लिए बंसी दलित होने के कारण मनुष्यता का अधिकारी नहीं है। एक सामंत के लिए एक मजदूर के श्रम और जीवन पर अंतहीन अधिकार केवल जाति के आधार पर ही कायम हो सकता है। यही कारण है कि वह बंसी को बार बार जातीय पहचान के आधार पर हीनता का बोध कराता चलता है ,जबकि मजहब के रूप में इस्लाम जाति की पहचान को अस्वीकार करता है।

परिवेश स्थान के साथ काल के अपने आयामों में उपस्थित है। लेखक दलित बस्ती के परिवेश का अतीत ,वर्तमान और भविष्य तीनों को ही अपनी कथा में समेटता चलता है। अतीत में इस बस्ती के लोगों ने गुलामी की कठोरता को ,उसकी क्रूरता को बर्दाश्त किया था। यह जाति की अनादि काल से चली आती गुलामी है। यह इतनी परिचित है कि इसको किसी परिचय की जरूरत नहीं है। सामंती युग में इस जाति प्रथा ने दलित को बॉध रखा था। अंगेजों के आगमन से राजनैतिक और कानूनी रूप से सामंतशाही कमजोर हुई और गुलामी के बंधन ढीले पड गए। इस सामंतशाही से संघर्ष की स्मृतियॉ लेखक की चेतना में उपस्थित है। जब बस्ती का वर्णन करते है तो वे उन दिनों की याद करते है कि जब दलितों ने सामंतो को पराभूत कर दिया था – '' कहा जाता है कि इसी जमीन पर बैठ कर चालीस गॉव के लोगों ने पंचायत की थी।.....जो बाद में जंगल पंचायत के नाम से मशहूर हुई थी। कहा जाता है कि यह जमीन चमारों ने मराठों से छीनी थी। अंग्रेज जब इस शहर में आए तो उन्होने यही विवरण दर्ज किया था।''[3] दलित शब्द केवल शोषण और दमन का पर्याय नहीं बल्कि संघर्ष और पराक्रम भी इस शब्द के गौरवपूर्ण इतिहास का अंग रहा है। इतिहास की समझ किसी समाज के लिए चेतना का प्रस्थान बिन्दु है। मुक्ति पर्व उपन्यास दलित समाज पर थोपी गई ऐतिहासिक उपेक्षा

[3] वही – मुक्ति पर्व , पेज नं0 16

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in

ISSN 2581-9429 IJARSCT

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

को दरकिनार कर उनके गौरवपूर्ण पलों को प्रस्तुत करती है। कहा भी जाता है कि जिस दिन शेर अपना इतिहास खुद लिखेगें उस दिन ही शिकारियों की बहादुरी का पर्दाफाश हो जाएगा । मुक्ति पर्व में लेखक इस पर्दाफाश की ओर बढते हैं। यह एक ऐतिहासिक तथ्य है कि 'महार और महजबी ' आदि दलित बहुमत की रेजिमेन्ट्स ने शूरवीर मानी गई तमाम जातियों की शूरवीरता को धूल में मिला दिया था। इस दलित शौर्य के लिए औपनिवेशिक शासन का भी योगदान है।

'मुक्तिपर्व ' का आरंभ गुलामी के पतन के आवाज और आजादी की आहट की दहलीज पर हुआ था। अंग्रेजी शासन को लेकर दलित पात्रों में दो नजरिए दिखाई देते हैं। पहला , इस शासन की सैन्य शक्ति से जनता में गहरी नफरत की भावना है। बस्ती की औरतें अंग्रेजी सिपाहियों का 'लाल मुँह वाले बंदर ' कहती हैं। लेकिन अंग्रेज प्रशासन के लिए , अंग्रेज अधिकारियों के लिए उनके कहने के लिए उनके पास प्रशंसा भरी बाते हैं। वे अंग्रेज प्रशासकों के निवास स्थान को 'ठंडी सडक ' के नाम से बुलाती हैं। पश्चिम भारत की चिलचिलाती धूप के बीच में ठंडी सडक राहत का रूपक है। शायद इसका कारण था कि अंग्रेज शासन मे पहली बार कानून का शासन लागू किया गया। कानून के सम्मुख सभी मनुष्यों की समानता का सिद्वांत । जाति असमानता की दूषित हवा में रहने के आदी भारतीय शायद भूल गए थे समानता भी सामाजिक सम्बन्धों कोई आधार हो सकता है। अकारण नहीं है कि आवेग के क्षणों में 'vkdkr ' भारतीयों के द्वारा , गालियों के बाद , सर्वाधिक इस्तेमाल होने वाला शब्द है। उपन्यास में नवाब ही नहीं बल्कि स्कूल के अध्यापक तक इस अथवा इस अभिप्राय की शब्दावली का प्रयोग बार बार करते हैं। आवेग के ऐसे अवसर पर व्यक्ति सभ्यता और शालीनता का लबादा उतार कर अपने प्रकृत रूप में आता है। कानून का शासन अंग्रेजी राज की ऐसी विशेषता है जिसने पहली बार सबकी 'औकात ' को कम से कम सिद्वांत रूप में बराबर कर दिया। शायद इसीलिए उस शासन की स्मृतियॉ जनमानस में , बंबइया फिल्मी किस्म के तमाम प्रचार–हथकंडों के बावजूद, बरकरार हैं। मुक्तिपर्व उपन्यास उन्ही स्मृतियों को सर्वाधिक शोषित स्त्री समूह के माध्यम से व्यक्त करता है। क्या यह अंग्रेजी शासन अगर बदस्तूर जारी रहा होता तो भारत के उत्पीडित समाज का भला कर सकता था ? लेखक इस बात से सहमत नहीं लगते है। बंसी के लिए अंग्रेज शासन उन बिचौलियों का शासन था , जो जमींदार , नवाब और कारिन्दे के रूप में उसके उपर काबिज थे। कम से कम इन सबसे तो किसी को रहम और नए रास्ते की उम्मीद नहीं थी । राजनैतिक आजादी ने समाज में दलित वर्ग को वयस्क मताधिकार और इसके जरिए अपनी तकदीर खुद तय करने का अधिकार दिया । बंसी इस लोकतांत्रिक रास्ते पर ही चलकर अपनी और अपने समाज की मुक्ति के रास्ते की ओर बढता है।

IJARSCT

International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology

International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal

ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

xqykeh dk vk/kj vkj vk/kjk (

उपन्यास में गुलामी का बंधन कुछ और नहीं बल्कि जाति का बंधन है। जाति की गुलामी एक ऐसा ताना बाना है , जिसे धर्म और आध्यात्मिकता के रेशे से बुना गया है और इसका खुला मकसद दलित समाज की आर्थिक उत्पादकता और शक्ति पर निर्बाध नियंत्रण कायम करना है। इस समूचे ताने बाने को भारतीय समाज कहते है । यह कहना कठिन है कि जाति और भारतीय समाज के बीच में आखिर बाईप्रोडक्ट कौन है ?

जिसे भारतीय समाज कहते है , जाति उसकी बुनियाद है। जाति का असर धर्म , भाषा , और नस्ल की सीमाओं के पार काम करता है। मुक्तिपर्व उपन्यास में बंसी और सुनीत का परिवेश शहरी है। यह माना गया कि शहर में पेशे की आजादी के कारण जाति का रूप समाप्त होता जाएगा । जाति का अस्तित्व उसके खास पेशे से जुडा होता है। शहर के व्यूटी पार्लर में बाल काटने का काम नाई नहीं सवर्ण व्यक्ति भी कर सकता है और कई बार करता भी है । पेशे के तौर पर तो जाति का अपने प्रकार्य से सम्बन्ध अलग हो गया लेकिन जाति का विघटन हुआ नहीं । सुनीत अपने स्कूल में शिक्षा में अव्वल छात्र है और बाद में एक शिक्षक बनता है। लेकिन इस समूची प्रक्रिया में उसको शिक्षा संपन्न ब्राहाण के समान बर्ताव अथवा सम्मान कभी नहीं मिल पाया। लेखक ने इस विडम्बना को कई बार भावनामय प्रसंगों में दर्शाया है। ऐसा नहीं है कि सवर्ण सत्ता में सभी लोग बुरे है। ऐसा होता तो आर्यसमाजी रामलाल के जैसे उज्जवल चरित्र का निरूपण उपन्यास में नहीं हुआ होता । शायद बात किसी आदमी के अच्छे या बुरे होने के बजाय सामाजिक प्रक्रिया पर गौर करने की अधिक है। यह प्रक्रिया ही तय करती है कि सामाजिक व्यवहार के मानक किस तरह से तय किए जाएंगे। सवर्ण रामलाल जैसे कई अच्छे आदमी थे ,अभी भी है और आगे भी रहेंगें लेकिन वे सामाजिक व्यवहार के मानक को बना या बिगाड नहीं पाते है। इसे हम उपन्यास के संदर्भ में ही देख सकते हैं। सुनीत पहली बार गॉव में अपनी ननिहाल जाता है। गॉव अपनी परंपरागत रचना और ठेठ जातीय ताने बाने के साथ उपस्थित है। बाहर से गॉव खुशगवार नजर आते हैं हर आदमी एक दूसरे से चाचा ,भय्या और भतीजे आदि के रिश्तों में बॅधा है। लेकिन यह खुशफहमी जल्द ही दूर हो जाती है क्योंकि यह रूमानी रिश्ते जाति के भीतर ही काम करते है। हर जाति दूसरी जाति के सामने अथवा पीठ पीछे दुश्मन की तरह है। अपनी जाति अथवा अपने से उपर की जाति का बुर्जुग दादा अथवा दादी है जबकि दूसरी जाति अथवा निम्न जाति का बुर्जुग तोता –तोती नाम से बुलाया जाता है। गॉव में जजमानी इस गुलामी का कार्यरूप है । दलित समाज के सवाल पर गॉव की अन्य सभी जातियों में एका हो जाता है। वे सभी के अपने मतभेद भूलकर दलितों के शोषण के सक्रिय रूप से सहमत अथवा मौन रूप से असहमत हो जाते हैं। यही वजह है कि सुनीत जब गॉव जाता है तो उसे सब कुछ ताजुज्ब कर देने वाला लगता है। इस गॉव में समय ठहर गया है। लगता है कुछ भी बदलने वाला नहीं ।

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

सामाजिक बदलाव पहली बार शहरी जीवन में ही नजर आता है। उपन्यास में दलित बस्ती शहर के किनारे स्थित है । यह मुख्य धारा का हिस्सा नहीं है। यह गॉव से अलग है लेकिन इसकी विशेषताओं को समेटे हुए है। इसे लेखक ने छोटे से प्रतीक के माध्यम से दर्शाया है। शहर के इस हिस्से में घंटाघर बेकार पडा है। लोगों को समय की सूचना अभी भी मुर्गे के द्वारा ही मिलती है। शहर की वैयक्तिकता और निजता के बजाय सामूहिकता हावी है । एक परिवार में पकने वाले खाने की महक दूसरे परिवार को मिल जाती है। इसके बावजूद यह दलित बस्ती गॉव नहीं है । इसमें जजमानी प्रथा का नामोनिशान खत्म हो चुका है । बंसी जैसा आदमी गुलामी को ठोकर मार देता है। इसके बावजूद उसके पास अपना अस्तित्व बचा ले जाने का अवसर है। खुदमुख्तारी का यह अवसर गॉव में उपलब्ध नहीं है। दलित का कोई भी विद्रोह जघन्य क्रूरता के साथ दबाया जाता है। उनके घर में आग लगाई जा सकती है , स्त्रियों की अस्मत पर हमला हो सकता है अथवा हत्या की जा सकती है। अधिकतर बाशिंदे इन्ही क्रूरताओं के कारण गॉव से पलायन करके शहर की दलित बस्ती में आकर बसे हैं। यह शहर पीडित मानवीयता के लिए पनाहगार के रूप में काम करता है।

बंसी और दलित समाज की गुलामी रोमन गुलामी से अलग है। प्रशासन में जाति प्रथा के अनुसार सार्वजनिक कार्य संपादित किए जाने का कोई लिखित कोड अथवा घोषित आचार संहिता नहीं हैं। इसके बावजूद बंसी और सुनीत जैसे लोगों के साथ जातिगत भेदभाव बदस्तूर जारी है। जाति की जडे शासन –प्रशासन के सिद्वांतो में नही हिन्दू धर्म की बुनावट में है। शासन चाहे हूण कुषाण , सुल्तान ,बादशाह अथवा महारानी विक्टोरिया का हो लेकिन जाति के ताने बाने पर कोई प्रभाव नहीं पडता है। कर्मवाद और पुर्नजन्म जैसी मान्यताएं जाति को दार्शनिक आधार प्रदान करती है तो रामायण ,गीता और रामचरित मानस जैसे महाकाव्य जाति और उॅच–नीच के मूल्यों को भावनात्मक आधार पर लोगों के बीच फैलाते है। उपन्यास में एक प्रसंग है कि पानी पिलाने वाला पंडित एक मुलाजिम है । प्रशासनिक दृष्टिकोण में सभी लोगों को सेवाएं प्रदान करना उसका फर्ज है। लेकिन उॅच नीच में उसका गहरा विश्वास उसे दलित समाज से नफरत सीखाता है। यही वजह है कि पानी पिलाते समय वह दलित बच्चों के साथ भेदभाव करता है। धर्म और परंपराओं का ऐसा प्रभाव है कि मुस्लिम जमींदार अलीवर्दी खान भी बंसी के मनोबल को गिराने और उसकी हीनता को जताने के लिए बार बार हिन्दू धर्म की इन्ही मान्यताओं और परंपराओं का सहारा लेता है। सुनीत अपने स्कूल का एक मेधावी विद्यार्थी है । वह उत्सुकता के लिए मंदिर को देखना मात्र चाहता है लेकिन सत्ता धारियों को उसका मंदिर में प्रवेश करना सहन नहीं हो पाता है। परंपराओं में दलित को धार्मिक अधिकार से भी वंचित कर दिया गया है। इनके बारे में सुनीत सोचता है– '' उसने किसी ब्राहाण को मंदिर बनाते नहीं देखा था । सभी मजदूर मंदिर बनाते थे। और वे दलित –पिछडी जातियों से ही हैं.....दोनो गमगीन थे। उनके कलेजे घायल कर

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 7, Issue 1, July 2019 Impact Factor: 4.819

दिए गए थे।''[4] धर्म और इसके विश्वासों का आशय सत्ता की जातियों के विशेषाधिकारों की रक्षा और उनका पोषण करना है ।

[4] मोहनदास नैमिशराय– मुक्तिपर्व ,पृ0सं0 111 , अनुराग प्रकाशन नई दिल्ली , 2012

ey xFk (

- आत्मकथा ; अपने अपने पिंजरे 1995
- कविता ; सफदर का बयान (कविता संग्रह)
- कहानी संग्रह ; आवाजें ; कहानी संग्रह तीन भाग
- उपन्यास ;आज बाजार बन्द है 2004 , क्या मुझे खरीदोगे 2005,जख्म हमारे 2011 समाज का अक्स
- नाटक ; हैलो कामरेड नाटक 2001 , हिन्दी रेडियो नाटक 2004
- इतिहास और नायक ; वीरांगना झलकारी बाई 2003(ऐतिहासिक उपन्यास),

सहायक ग्रंथ ;

- जाति का विनाश – डॉ. बी.आर. अम्बेडकर (स्वराज प्रकाशन, 1936)
- गुलामगिरी – ज्योतिबा फुले (राधाकृष्ण प्रकाशन, 1873)
- दलित साहित्य का सौंदर्यशास्त्र – शरणकुमार लिंबाले (वाणी प्रकाशन, 2001)
- भारतीय सुशिक्षित अछूत – डॉ. अंगने लाल (तक्षशिला प्रकाशन, 1994)
- दलित चिंतन की भूमिका – कँवल भारती (इतिहास बोध प्रकाशन, 1995)
- दलित साहित्यरू स्वरूप और संभावनाएँ – डॉ. धर्मवीर (वाणी प्रकाशन, 2000)
- हिंदी दलित साहित्यरू विकास और विविध आयाम – डॉ. एन. सिंह (वाणी प्रकाशन, 2004)